शताब्दी तक तुर्कों ने समय–समय पर भारत पर आक्रमण किये। तुर्कों के प्रारम्भिक आक्रमणों का उद्देश्य तो मात्र धन–सम्पत्ति लूटना था किन्तु बाद में उनका उद्देश्य साम्राज्यवादिता में बदल गया। तुर्कों के आक्रमणों से भारत को अत्यधिक हानि हुई क्योंकि उन्होंने न केवल धन–सम्पत्ति पर अधिकार किया वरन् हिन्दू राज्य के स्थान पर तुर्क–शासन की स्थापना की । इस प्रकार हिन्दू–राज्य का स्वतन्त्र अस्तित्व ही समाप्त हो गया।

संदर्भ

1. स्कन्दगुप्त का भीतरी स्तम्भ अभिलेख
2. ध्न्यविष्णु का एरण अभिलेख, लीट, गुप्त अभिलेख स. 36
3. यशोधर्मन का मन्दसौर अभिलेख, लीट, गुप्त अभिलेख
4. द क्लासिकल एज
5. हेग व कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया
6. डॉ0 आर0सी मजूमदार, द स्ट्रगलर फॉर एम्पायर

******

मन्नू भंडारी की भाषिक सर्जनात्मकता

डॉ0 डेजी कुमारी*

ABSTRACT:- भाषा सृजन की अनिवार्य शर्त है। किसी भी रचना का उसके पाठक वर्ग से सही तालमेल सर्वप्रथम भाषिक स्तर पर ही बैठता है। अतः भाषा जितनी सहज और संप्रेषणीय होगी, पाठक वर्ग कथ्य को और उस कथ्य के माध्यम से अभिव्यक्त लेखक के मनोभावों और विचारों को उतना ही नजदीक से महसूस कर पाएगा। भाषा सिर्फ कुछ भारी–भरकम शब्दों का नाम नहीं है। भाषा एक सम्वेदना है। विभिन्न मनः स्थितियों और परिस्थितियों को समझने और विश्लेषित करने की सुखद चेष्टा। यह सम्वेदना जितनी सामाजिक होगी भाषा उतनी ही लचीली होगी, व्यापक होगी। परिवेश, चरित्र और चरित्रों की मनः स्थितियों में आए बदलावों की सूक्ष्म पकड़ से उपजी लेखकीय प्रत्युत्पन्नमति ही लचीली भाषा का निर्माण करती है। इन बदलावों के साथ भाषा में आया बदलाव अपेक्षित भी है और कथ्य के स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद भी। भाषा का 'रूप बदलना' इसी को कहते हैं। वह जितना अधिक रूप बदलती है उतनी ही स्पष्टत्तर होती जाती है और उसका यह लचीलापन ही कथ्य की सजीवता को अन्त तक बचाए रखता है।

मन्नू भंडारी का समूचा साहित्य जिस सहजता, संवेदना और पठनीयता के लिए जाना जाता है वही सहजता, संवेदना और पठनीयता उनकी भाषा में अंतर्निहित है, अन्यथा क्या वजह है कि मन्नू भंडारी व्यापक पाठक समाज के बीच उतनी ही लोकप्रिय रही हैं जितनी साहित्यिक और समालोचक जगत में। शास्त्रीयता, कलात्मकता और अमूर्तता के प्रभाव से दूर पानी की निर्मल धारा–सी बहती मन्नू की भाषा अपने सधे, सरल और सघन रूप में अपना प्रभाव छोड़ती है।

Key Words: मन्नू भंडारी, भाषा, सर्जनात्मकता, सम्प्रेषण आपका बंटी, महाभोज, एक इंच मुस्कान

भाषा मुँह से उच्चारण किए जानेवाले संकेतों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह के सदस्य सहयोग तथा अन्तःक्रिया करते हैं, और जिसके मासे सीखने की प्रक्रिया को सफल बनाया जाता है एवं जीवन की एक विधि–विशेष को निरन्तरता तथा परिवर्तनशीलता दोनों ही प्राप्त होती है। सामान्यतः

***एम0ए0 (हिन्दी), बी0एड0, पी–एच0डी0**
(ति0 माँ0 भा0 वि0 वि0, भागलपुर)

मनुष्य और मनुष्य के बीच, वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान–प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि–संकेतों का जो व्यवहार होता है उसे भाषा कहते हैं। प्रायः अधिक व्यवस्थित एवं सर्वसमावेशी रूप में भाषा मानव–उच्चारणावयवों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि–प्रतीकों की वह संरचनात्मक व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज विशेष के लोग आपस में विचार–विनिमय करते हैं, लेखक, कवि या वक्ता रूप में अपने अनुभवों एवं भावों आदि को व्यक्त करते हैं तथा अपने वैयक्तिक और सामाजिक व्यक्तित्व, विशिष्टता तथा अस्मिता के संबंध में जाने–अनजाने जानकारी देते हैं। सर्वांगतः एवं संक्षिप्ततः भाषा यादृच्छिक, रूढ़, उच्चरित संकेत की वह प्रणाली है जिसके माध्यम से मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय, सहयोग अथवा भावाभिव्यक्ति करते हैं।

पहले यह धारणा थी कि उपन्यास की भाषा अभ्युदेश्यात्मक होती है। उपन्यास पढ़ा जाता है उसके कथ्य एवं पात्र को समझने–जानने के लिए न कि उसके निजी शब्द–संरचनागत सौंदर्यबोध के लिए। अतः उपन्यास में भाषा–अध्ययन का विशेष महत्त्व नहीं है। पर आज धारणा बदल गई है। अब यह स्वीकार किया जा चुका है कि उपन्यास की भाषा का उसकी आन्तरिक संरचना तथा बाह्य स्थितियों दोनों से जटिल और गहरा सम्बन्ध होता है। उपन्यास की अभिव्यक्ति कलात्मक होती है। उसे वर्णन और सम्प्रेषण दोनों करने पड़ते हैं। अतः उपन्यास–लेखक नपी–तुली भाषा, अर्थगर्भत्व, अर्थ–वाहक संकेतों के माध्यम से अपनी बात कहता है, बिम्बों, अर्थ की गूँज–अनुगूँज उत्पन्न करनेवाले मुहावरों और शब्दों का प्रयोग करता है। श्रेष्ठ उपन्यास तथ्यों का समाज–शास्त्रीय आलेख भर नहीं होता, वह जीवन की अनेकविध जटिलताओं का साक्ष्य भी होता है। सार्थक अनुभव की पहचान रचना में भाषा के स्तर पर ही हो सकती है।

वस्तुतः उपन्यास की भाषा जीवन के व्यापक फलक पर जीवित क्षणों से ग्रहण की जाती है। सामान्यतः वह साधारण जन–जीवन से उठाई जाती है और कलात्मक सौन्दर्य तथा कल्पना तत्व की भूमिका से नवीन रूप ग्रहण करके उपन्यास–रचना की भाषा बन जाती है। यही कारण है कि एक श्रेष्ठ उपन्यास की भाषा में सूक्ष्म चित्रण, वर्णन; संवाद, सूचना, सम्प्रेषण, तथ्य, मनोवैज्ञानिकता, संवेगात्मकता और घटित जीवन के भीतर बहनेवाली यथार्थ की धारा को चित्रित करने की अद्‌भुत शक्ति विद्यमान होती है। सहजता और कलात्मकता इसकी अन्यतम विशेषताएँ हैं।

भाषा उपन्यासकार के हाथों में एक सशक्त उपकरण है। वह शब्द–योजना, वाक्य संरचना, वाक्य–विन्यास और ध्वनि–पैटर्न द्वारा कथ्य को विशेष प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने में सफल होता है। इसका पाठक पर भी विशेष प्रभाव पड़ता

है। प्राचीन लेखक व्याकरण–सम्मत सुसम्बद्ध वाक्य अलंकृत शब्दावली एवं भावाभिव्यक्तिपूर्ण वर्णन द्वारा अपनी रचना को प्रभावशाली बनाते थे। आज के लेखक अपूर्ण वाक्यों के प्रयोग, विराम–चिन्हों और संयोजकों के सांकेतिक प्रयोग तथा परम्परागत वाक्य–रचना की बहिष्कृति द्वारा अपनी शैली में अपेक्षाकृत अधिक लोच लाकर साथ ही मन में उठनेवाली भाव–तरंगों और क्षण–क्षण परिवर्त्तित चेतना–धारा को छोटे–छोटे वाक्यों, विम्बों और प्रतीकों से युक्त करके अपनी रचना को अधिक सार्थक और यथार्थ प्रस्तुति करने में सफल हो रहे हैं।

मन्नू भंडारी के उपन्यासों की भाषा आधुनिक तथा सर्जनात्मक है। परिनिष्ठित हिन्दी में लिखित उनके चारों उपन्यासों 'एक इंच मुस्कान', 'आपका बंटी', 'महाभोज' और 'स्वामी' में सहज, स्वाभाविक और सर्वथा अकषत्रिम भाषा का सौन्दर्य परिलक्षित होता है। 'एक इंच मुस्कान', 'आपका बंटी', 'महाभोज' और 'स्वामी' शीर्षक के स्तर पर प्रतीकात्मक हैं। उपन्यास हो या कहानी मन्नू भंडारी आलंकारिक, चामत्कारिक शिल्प का प्रयोग नहीं करतीं। वर्तमान जीवन की विसंगतियों और समस्याओं को वे प्रकष्त भावभूमि से उठाती हैं और उनका सामाजिक यथार्थ इस ढंग से रचनाओं में व्यक्त होता है कि पाठकीय संवेदनाओं को दीप्त कर देता है। हिन्दी का सबसे सफल और कलात्मक उपन्यास है, मन्नू भंडारी का – 'आपका बंटी'। भाषा के सर्जनात्मक प्रयोग की दषष्टि से मन्नू भंडारी हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रभा खेतान, सुरेन्द्र वर्मा, प्रियंवद आदि की श्रेणी में गिनी जाती हैं – भाषिक सर्जनात्मकता की दषष्टि से हजारी प्रसाद द्विवेदी, मन्नू भंडारी, प्रभा खेतान, सुरेन्द्र वर्मा, प्रियंवद आदि प्रमुख हैं जिन्होंने विभिन्न शैलीय उपकरणों की सहायता से उपन्यास की भाषा को सर्जनात्मक उत्कर्ष पर पहुँचाया है।

सांकेतिकता स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथा–भाषा की एक मुख्य पहचान बन गई थी। उपन्यास का शीर्षक 'महाभोज' भी एक सांकेतिक अर्थ देता है। सन् 1970 के बाद शोषितों–दलितों की लाश पर राजनीति करने वाले लोगों की कोई कमी नहीं थी। जलाए गए हरिजनों के बाद बिसू की लाश का मिलना और उपचुनाव में इस हरिजन–हत्या को वोट के लिए अपने अपने पक्ष में भुनाने की जुगत भिड़ाना राजनेताओं के लिए वैसा ही आनंददायद महाभोज है, जैसा किसी जानवर की लाश कुत्तो, गिद्धों और कौओं के लिए हुआ करती है।

यही वजह है कि 'महाभोज' की भाषा में जहां व्यंग्यात्मकता है, तीक्ष्णता है, चुभन है, वर्गीय प्रवषत्ति है वहीं परिस्थितियों को व्यक्त करने वाली भाषा का अद्‌भुत रूप चटक, घोर यथार्थवादी, शुष्क, तीक्ष्ण भाषा की जगह मन्नू भंडारी ऐसी भाषा चुनती हैं जो स्थान विशेष, काल और व्यक्ति के आंतरिक स्वरूप उजागर कर देती है। यानी भाषा स्वतः आती–जाती है।

सहज, सरल संप्रेषित करने वाली भाषा में अपने विचार–अनुभव जगत को व्यक्त करना कोई आसान बात नहीं है। मन्नू जी की विलक्षणता ही इसमें है कि वह गहरी से गहरी बात को सहज ढंग से कह देती हैं। जीवन की विरासत की बात हो या दर्शन का मार्मिक पक्ष हो या गूढ बातें उनकी भाषा में आते ही सारी चीजें जैसे साफ–साफ समझ में आने लगती हैं। मनोविज्ञान पर मन्नू जी की गहरी पकड़ है। इसलिए जहां–जहां अकथ को व्यक्त करने की बात आती है मन्नू जी की कलम स्वतः ही मन को खोलने वाली भाषा रचती जाती है, एक स्त्री के मन की व्यथा को, घुटन को, उदासीनता को, उसकी तड़प को, उसके जीवन को लेकर उकताहट को बहुत अद्‌भुत ढंग से मन्नू जी अपने कथा–साहित्य की भाषा में लाती हैं। बाहरी परिवेश के साथ मन के भीतर का दृश्य एकाकार उठता है। स्त्री–मन की तड़प को इसमें अच्छी भाषा में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' की भाषा में आत्मलाप आ सकता था, अतिभावुकता भी आ सकती थी, लेकिन मन्नू जी ने कितने ही बातों और प्रसंगों को तराशी हुई सांकेतिक भाषा में कह दिया है। कहीं भी मन्नू जी भाषा संयम नहीं खोती हैं। व्यक्तिगत जीवन की बातें कहते हुए भाषा फिसल जाती है, पर मन्नू जी ने जिस तटस्थता के साथ भाषा का प्रयोग किया है वह उनके जैसी विलक्षण लेखिका ही कर सकती है।

यह माना जाता है कि समय के साथ हर रचनाकार की भाषा बदलती है, परिपक्व होती है, परंपरा से चली आ रही भाषा से अलग वह स्वयं की भाषा गढ़ता है, रचता है, उसको अपनी पहचान देता है, स्वरूप और स्वर देता है, उसके मुहावरे, उसकी लाक्षणिकता, उसके रूपक, उसकी ध्वनियां, उसका व्यापक प्रयोग सब कुछ बदलते हुए अपना रूप गढ़ते हैं। मन्नू जी की भाषा का स्वभाव, रूप और पहचान मूलतः एक संवेदनशील रचनाकार की भाषा है।'

'महाभोज' उपन्यास की गरिमामय महत्ता में निस्सन्देह उसके भाषा–शिल्प का बहुत बड़ा हाथ है। 'महाभोज' की भाषा–संरचना कहीं स्थान–विशेष की भाषायी संस्कृति का रंग प्रस्तुत करती है तो कहीं किसी बोली का सौंदर्य। अनेक पात्र अपने दैनन्दिन प्रयोग की बोली में बात करते हुए दिखाई दिए हैं। इससे उनकी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और जातिगत चेतना प्रत्यक्ष हुई। इतना ही नहीं उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा रूप ही उनकी दलित स्थिति और विवशता को भी प्रकट करने में समर्थ सिद्ध हुआ।

लेखक के व्यक्तित्व की छाप रचना की भाषा पर अवश्य पड़ती है। उनके उपन्यासों की भाषा की शिष्ट मर्यादा के मूल में लेखिका का शिष्ट नारीत्व है। शिक्षा और उससे भी बढ़कर संस्कार मन्नू भंडारी को असंस्कृत अथवा कुसंस्कृत

भाषा रचने का आज्ञापत्र नहीं देते। यही कारण है कि 'आपका बंटी' की भाषा सहज, सम्प्रेषणीय और लचीली होने के साथ ही सभ्य और कोमल भी है।

उपन्यास का प्रत्येक पात्र उसी भाषा का प्रयोग करता है जो उसके वर्ग, पेशा और व्यक्तित्व से साम्य रखती है। चाहे वकील चाचा की भाषा हो या फूफी की, चाहे शकुन की भाषा हो या टीटू की माँ की या पुनः आदेशपाल की बेटी की ही भाषा क्यों नहीं हो, सब अपनी शिक्षा और संस्कार की भाषा का प्रयोग करते नजर आते हैं। पात्रों के अनुरूप होने के साथ ही 'आपका बंटी' की भाषा देशकाल के भी अनुरूप है – सामने खड़ी लम्बी छुट्टियाँ और गर्मी के बेहद लम्बे, अलस और उदास दिन! कॉलेज क्या बन्द हो जाएँगे जैसे समय गुजारने का एक अच्छा खासा बहाना खतम हो जाएगा। वरना उसके नितान्त घटनाहीन जीवन में मात्र कॉलेज जाना भी एक घटना की ही अहमियत रखता है। लेखिका शब्द–चित्र प्रस्तुत करने में भी उतनी ही सिद्धहस्त हैं – शाम को ममी लॉन में पलंग डालकर लेटी हैं। मौसम में हल्की सी ठंडक है, पर फिर भी बाहर खूब अच्छा लग रहा है। ममी की छाती पर एक खुली हुई किताब उल्टी रखी है। आसमान में जाने क्या देख रही है ममी। बंटी दौड़–दौड़ कर क्यारियों में पानी डाल रहा है। टीटू पाइप लेकर पौधे भी धो रहा है। 'स्वामी' में कथन की अनोखी शैली – जो लोग मामा को ठीक से नहीं जानते वे इस बात को नहीं समझ सकते और मामा को ठीक से कोई जानता ही नहीं।

मन्नू भंडारी की भाषा के मानवीय मन की अंतर तहों में चलते द्वन्द्वों–संघर्षो और भावनाओं को जीवंतता के साथ पाठकों के भीतर उतारने का काम करती है। मनोविज्ञान परिवेश और चरित्रों के विविध रूपों को व्यक्त करती मन्नू भंडारी की भाषा उनके लेखन की सबसे बड़ी ताकत है।

थोपी गई बनी–बनाई भाषा का प्रयोग मन्नू भंडारी नहीं करती हैं बल्कि सहज ढंग से निःसृत होती भाषा उनके कथ्य को, उनकी रचनात्मकता की खूबसूरती को बढ़ाती है। व्यक्ति चित्र को सजीवता के साथ वह थोड़े से शब्दों में कह देती हैं। वह अपने आस–पास के परिवेश को इतनी संजीव भाषा में व्यक्त करती हैं कि लगता है समूचा परिवेश आंखों के सामने है। परिवेश के कितने ही रूप उनकी रचनाओं में जीवंत हो उठते हैं, वहां वे शब्दों को इस तरह लेती हैं जैसे कोई बच्चा अपनी ही मस्ती में गेंद उछाल रहा हो। 'महाभोज' की भाषा में जिस राजनीतिक पृष्ठभूमि की झलक दिखाई देती है और उसमें जो चरित्र आते हैं वह उस वर्ग का प्रतिनिधित्व तो करते ही हैं, भाषा के द्वारा भी उनके संपूर्ण व्यक्तिगत, वर्ग–जाति और प्रवृत्तियों को समझा जा सकता है।

मन्नू जी की भाषा को पढ़ते हुए हर बार यही महसूस होता रहा है कि

भाषा वह जो भावनाओं को अनेक रंगों में रंगती है, जो भावनाओं के संप्रेषित करने में अहम भूमिका निभाती है जो पात्रों के व्यक्तित्व को उद्‌भाषित करती है , जो जड़ चीजों में भी प्राण डाल देती है, और सांकेतिक रूप से वह सब कह देती है जो तमाम–तमाम शब्दों में भी नहीं कहा जा सकता है। मन्नू भंडारी की भाषा ने वह कमाल किया है जो साहित्य को आम पाठकों से लेकर खास पाठकों, बुद्धिजीवियों और विद्धानों तक पहुंचा सकी है। उनकी कहानियों की भाषा हो या उपन्यासों की या आत्मकथा की उसमें एक खास किस्म की तरलता, तटस्थता, साफगोई, दृश्यात्मकता, चित्रात्मकता, व्यंग्यात्मकता और भावनात्मकता दिखाई देती है। उनकी भाषा सूक्तियों की तरह जीवन, प्रकृति और व्यक्तिओं के रहस्यमय से लगने वाले स्थलों को खोलती जाती है। जीवन या व्यक्ति जैसा दिखाई दे रहा है वह उतना ही या वैसा ही नहीं हैं। भाषा देश, जाति, समाज व्यक्ति और वर्ग की पहचान होती है। मन्नू जी ने हर पात्र और स्थिति को व्यक्त करते हुए भाषा पर ध्यान दिया है। उनका लेखन कभी भी कहीं भी अपनी भाषा नहीं बोलता है, न बोलने की कोशिश करता है। जैसा परिवेश वैसी भाषा। यही बात रचनाकार को बड़ा बनाती है कि वह स्वयं रहकर भी स्वयं को अलग रखे, यद्यपि मन्नू जी की भाषा के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है और लिखा जाता रहेगा, लेकिन मन्नू जी की कहानियों, उपन्यासों और आत्मकथा को पाठक बार–बार पढ़ते रहेंगे, सराहते रहेंगे क्योंकि उन्हें लगता है कि उनकी बात को, उनकी भावनाओं को उनके संघर्षों को और उनके सुख दुःखों को उनकी अपनी भाषा में कहा गया है।

संदर्भ

1. डॉ. श्यामसुंदर दास : 2009 : भाषाविज्ञान : प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली
2. डॉ. भोलानाथ तिवारी : 2010 : भाषा विज्ञान : किताब महल, नई दिल्ली
3. देवेन्द्रनाथ शर्मा/दीप्ति शर्मा : 2007 : भाषा विज्ञान की भूमिका : राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा0 लि0, नई दिल्ली
4. मन्नू भंडारी : 2009: सम्पूर्ण उपन्यास : राधाकष्ष्ण, नई दिल्ली
5. राजेन्द्र यादव/मन्नू भंडारी : 1962 : एक इंच मुस्कान : अक्षर प्रकाषन, नई दिल्ली
6. मन्नू भंडारी :1979: महाभोज : राधाकष्ष्ण प्रकाषन प्रा. लि. नई दिल्ली
7. मन्नू भंडारी : 1971 : 'आपका बंटी' : अक्षर प्रकाषन प्रा. लि. : नई दिल्ली
8. मन्नू भंडारी : स्वामी : 2003 : नेषनल पब्लिषिंग हाऊस : नई दिल्ली
9. पाखी : सं0 प्रेम भारद्वाज : जनवरी– 2016

****